शैक्षिक चिन्तक रूसो
(1712 – 1778)
[Educational Thinker Rousseau]

रूसो की जीवनी और कार्य
(Biography and Works of Rousseau)

रूसो का जन्म स्विट्जरलैण्ड के जैनेवा नगर में 1712 में हुआ था। इनके जन्म के कुछ दिन बाद ही इनकी माता की मृत्यु हो गई, इसलिए इनकी देखभाल इनके पिता और चाची ने की। रूसो के पिता एक साधारण घड़ीसाज थे और बड़ी मनमौजी प्रकृति के व्यक्ति थे। रूसो से वे प्रेम तो करते थे पर इनकी उचित देखभाल नहीं कर सके। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा रूसो ने अपने पिता से प्राप्त की थी और 6 वर्ष की आयु में उपन्यास पढ़ने लगे थे। अब इन्हें स्कूल भेजा गया, पर वहाँ के कृत्रिम पर्यावरण और दण्ड व्यवस्था का इन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और ये स्कूल से भाग खड़े हुए। इन्होंने अपने घर पर ही इतिहास एवं धार्मिक पुस्तकें पढ़ना प्रारम्भ किया। पढ़ने से जब इनका मन ऊबता था तो ये अपने नगर के प्राकृतिक दृश्यों का अवलोकन किया करते थे। दस वर्ष की आयु तक इनका यही कार्यक्रम रहा। जैनेवा के प्राकृतिक वातावरण का इन पर गहरा प्रभाव पड़ा जो आगे चलकर इनके चिन्तन एवं लेखन में प्रस्फुटित हुआ। 10 वर्ष की आयु पर इन्हें एक शिक्षक के घर भेजकर पुनः पढ़ाने का प्रयत्न किया गया लेकिन यहाँ भी इनका मन अधिक दिन नहीं लगा।

जब रूसो केवल 12 वर्ष के थे इन्होंने एक शिल्पी के यहाँ कार्य करना प्रारम्भ किया। इस व्यवसायी का व्यवहार अच्छा नहीं था अतः रूसो ने कुछ दिन बाद ही उसके यहाँ जाना छोड़ दिया। अब रूसो के पास कोई कार्य नहीं था। ये आवारों की तरह इधर-उधर घूमा करते थे। इस समय इनके हृदय में प्रकृति प्रेम की नींव और गहरी हो गई। संवेदनशील इस किशोर पर दीन-दुःखी मानवों के जीवन का भी प्रभाव पड़ा और ये इनके दुःखों को दूर करने की सोचने लगे। अपना जीवन चलाने के लिए ये छोटे-मोटे शिल्प कार्य भी करते रहे। 21 वर्ष की आयु तक इन्होंने अपना जीवन इसी प्रकार बिताया। इसी समय समाज ने इन पर झूठे आरोप लगाए और इन्हें कठोर दण्ड दिया। इससे समाज के प्रति इनकी आत्मा विद्रोह कर उठी। अपने देश की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति से भी रूसो को बड़ी घृणा थी। परन्तु विवशता थी, साधनहीन होने के कारण ये अन्दर ही अन्दर घुटकर रह जाते थे। 25 वर्ष की आयु होने पर इन्होंने अपनी मातृभूमि को छोड़ दिया और फ्रांस चले गए। यहाँ से इनके जीवन का दूसरा अध्याय प्रारम्भ होता है।

Scanned with CamScanner

फ्रांस में रूसो ने साहित्य और विज्ञान का अध्ययन आरम्भ किया और थोड़े ही समय में इन्होंने प्लेटो, हॉब्स, लॉक, मॉन्टेन, फेनेलन, वाल्टेयर, मेलब्रैन्की, डेकार्टे, लाइवनीज तथा न्यूटन आदि के ग्रन्थ पढ़ डाले। प्लेटो की 'रिपब्लिक' और डीफो के 'राबिन्स क्रूसो' से ये अत्यधिक प्रभावित हुए। लॉक के शिक्षा सम्बन्धी विचारों का भी इन पर अमिट प्रभाव पड़ा। अब ये लेखक और शिक्षक बनने की बात सोचने लगे। 1741 में इन्होंने दो बालकों को पढ़ाना शुरू किया लेकिन कुछ दिन बाद इन्होंने यह कार्य भी छोड़ दिया।

पर्यटन में रूसो की रुचि बराबर रही। इन्होंने फ्रांस के विभिन्न भागों का भ्रमण किया और वहाँ की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति का अध्ययन किया। फ्रांस के कष्टमय कृषक जीवन का इनके हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ा। अपने स्वयं के जीवन एवं सामाजिक व्यवहार से ये सन्तप्त थे ही, परिणामतः इनकी लेखनी चलने लगी; पर इस समय इनके लेख प्रकाश में न आ सके। 1744 में इन्होंने अपनी दासी से विवाह सम्बन्ध कर लिया और उसके सहयोग से जीवन की विभीषिका से लड़ते रहे। अपनी जीविका चलाने के लिए इन्होंने अनेक कार्य किए पर किसी में भी सफल नहीं हुए । 1750 में इनकी रचनाएँ प्रकाश में आने लगीं। 'द प्रोग्रेस ऑफ आर्ट एण्ड साइन्स' (The Progress of Art and Science) इनकी पहली रचना थी। इस वर्ष इन्हें अपने निबन्ध 'डिसकोर्स ऑन दी साइन्सेज एण्ड आर्ट्स' (Discourse on the Sciences and Arts) पर पुरस्कार मिला। 1754 में इनका एक निबन्ध 'सोशल इनइक्वैलिटी' (Social Inequality) प्रकाशित हुआ। इससे इन्हें चारों ओर प्रसिद्धि मिली। इसके बाद इनकी दो और रचनाएँ प्रकाशित हुईं 'डिस्कोर्स ऑन पौलिटिकल इकोनामी' (Discourse on Political Economy) और 'द ओरिजिन ऑफ इनइक्वैलिटी अमंग मैन' (The Origin of Inequality Among Man)। 1755 में इन्हें अपनी पुस्तक 'दी ओरिजिन ऑफ इनइक्वैलिटी अमंग मैन' पर पुरस्कार मिला। इससे इनकी ख्याति और बढ़ी। इस ख्याति से इन्हें बड़ा सन्तोष हुआ और अब ये चिन्तन और लेखन में ही मस्त रहने लगे। इस बीच इनकी अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुईं और इनकी ख्याति और बढ़ी। 1761 में इन्होंने 'द न्यू हेलॉयज' (The New Heloise) लिखी। इस पुस्तक में रूसो ने गृह शिक्षा पर प्रकाश डाला है और अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति माता-पिता की भूमिका स्पष्ट की है। 1762 में इन्होंने समाज को दो बड़े ग्रन्थ और दिए— एक 'सोशल कान्ट्रेक्ट' (Social Contract) और दूसरा 'एमिल' (Emile)। सोशल कान्ट्रेक्ट में रूसो ने अपने सामाजिक एवं राजनैतिक विचार प्रकट किए हैं। इस पुस्तक में इन्होंने एकतन्त्र एवं कुलीनतन्त्र के स्थान पर लोकतन्त्र की श्रेष्ठता स्थापित की है। रूसो के इन विचारों ने आगे चलकर 1789 में फ्रांस की इतिहास प्रसिद्ध क्रान्ति को जन्म दिया। रूसो फ्रांस की 1789 की क्रान्ति के अग्रदूत और आधुनिक लोकतंत्र के जनक माने जाते हैं।

एमिल रूसो की दूसरी क्रान्तिकारी रचना है। इसमें इनके शिक्षा सम्बन्धी विचार बड़े व्यवस्थित रूप से प्रकट हुए हैं। इसमें इन्होंने शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य, पाठयचर्या, शिक्षण विधियों, अनुशासन और सहशिक्षा पर व्यवस्थित एवं विस्तृत रूप से लिखा है। एमिल उपन्यास शैली में लिखी गई है। इसमें पाँच अध्याय हैं। पहले चार अध्यायों में एक काल्पनिक बालक (नायक) की शैशव, बाल्य, किशोर और प्रौढ़ आयु पर शिक्षा का वर्णन किया गया है और पाँचवें अध्याय में उसकी भावी पत्नी सोफिया (नायिका) की शिक्षा का वर्णन किया गया है। शिक्षा के क्षेत्र में यह एक

Scanned with CamScanner

अद्वितीय पुस्तक मानी जाती है। विद्वान इसे शिक्षा सम्बन्धी शोध ग्रन्थ (Treatise of Education) कहते हैं। परन्तु राजनैतिक लोगों की दृष्टि में यह उस समय धर्म विरोधी पुस्तक मानी गई। इसकी बड़ी आलोचना हुई। चर्च एवं राज्य ने भी इसका बड़ा विरोध किया और इसकी प्रतियाँ जला देने की आज्ञा प्रसारित की गई। इसी समय फ्रांस सरकार ने रूसो पर अनेक दोष लगाकर इन्हें कारावास की सजा दी। 1766 में इन्हें फ्रांस से निकाल दिया गया। तब ये इंग्लैण्ड चले गए।

इंग्लैण्ड में रूसो ने अपने जीवन के चार वर्ष व्यतीत किए। लेखन कार्य ये यहाँ भी करते रहे। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'कन्फेशन्स' (Confessions) का प्रथम भाग इन्होंने इंग्लैण्ड में ही लिखा था। 1770 में ये पैरिस लौटे। यहाँ इन्होंने अपने जीवन के अन्तिम वर्ष बिताए और 'कन्फेशन्स' का द्वितीय भाग लिखा। इस पुस्तक में रूसो ने अपने जीवन की घटनाओं, विशेषकर भूलों को उजागर किया है, उन्हें स्वीकार किया है और मनुष्यों को उनसे बचने की सलाह दी है। पर अफसोस! इतनी अपूर्व ख्याति और जन कल्याण के बावजूद रूसो का अन्तिम समय उनके प्रारम्भिक जीवन से भी अधिक कष्टों के बीच व्यतीत हुआ। 1778 में इस क्रान्तिकारी युग पुरुष की ऐहिक लीला समाप्त हो गई।

रूसो का दार्शनिक चिन्तन
(Philosophical Thoughts of Rousseau)

प्रत्येक विचारक की अपनी एक दार्शनिक विचारधारा होती है, यह बात दूसरी है कि वह उसका स्पष्ट रूप से प्रतिपादन करता है अथवा नहीं करता। रूसो एक ऐसे विचारक हैं जिन्होंने अपने दार्शनिक विचारों को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत नहीं किया है। इनके दार्शनिक विचारों का अनुमान हम इनके आचरण, कथन और लेखों से ही लगाते हैं। इनके आचरण, कथनों और लेखों में भी बड़ी विविधता है, ये कहीं आदर्शवादी नजर आते हैं तो कहीं प्रकृतिवादी।

रूसो ईश्वर में विश्वास करते थे, मानव को जन्म से शुद्ध मानते थे और राज्य की आवश्यकता स्वीकार करते थे। ये तीनों विचार आदर्शवादी विचार हैं। इस दृष्टि से इन्हें आदर्शवादी विचारक कहा जाता है। राजनीतिशास्त्र के विद्वान तो इन्हें आदर्शवादियों का जनक मानते हैं। परन्तु मानव जीवन को सुखमय बनाने सम्बन्धी इनके विचार पूर्णरूपेण प्रकृतिवादी हैं। ये मानव जीवन के किसी अन्तिम उद्देश्य में विश्वास नहीं करते थे, ये तो उसे इसी जीवन के लिए तैयार करने पर बल देते थे। इस सम्बन्ध में इनके विचार बड़े क्रान्तिकारी हैं। इनके अनुसार प्रत्येक मनुष्य का अपना व्यक्तित्व होता है, उसकी अपनी रुचियाँ होती हैं और अपनी आवश्यकताएँ होती हैं। सभी मनुष्य जन्म से स्वतन्त्र पैदा होते हैं और स्वतन्त्र रहना चाहते हैं। परन्तु समाज उन्हें स्वतन्त्र नहीं रहने देता और अपने नियमों के बन्धन में बाँधता है। इनके अपने विचार में ये सामाजिक बन्धन ही हमारे अन्दर बुराई पैदा करते हैं। यही कारण है कि रूसो मनुष्य को सामाजिक बन्धनों से मुक्त कर उसके स्वतन्त्र विकास की बात करते थे। अपने समय के समाज से ये इतने दुःखी थे कि इन्होंने अपनी सारी शक्ति उसके विरोध में लगा दी। विरोध में ये इतने आगे बढ़ गए कि इन्होंने सभ्यता, संस्कृति, नैतिकता और धर्म सभी को निरर्थक कह डाला। इतना ही नहीं अपितु इनको ही मानव जीवन के कष्टों का कारण बताया। विरोध की बौखलाहट में ये यह भी भूल गए कि मानव की

Scanned with CamScanner

यह सभ्यता और संस्कृति उसकी युग-युग की साधना का परिणाम है और नैतिकता एवं धर्म मानव जीवन के आधार हैं। परन्तु उस समय इनका इस प्रकार सोचना स्वाभाविक था। उस समय यूरोप भर में धर्म के नाम पर भोली जनता का शोषण हो रहा था, धर्म और राज्य के ठेकेदार अपने को ही ईश्वर समझते थे और अपने हित के लिए व्यक्ति के हितों का शोषण करते थे। रूसो स्वयं इसका शिकार हुए थे।

रूसो मनुष्य की प्रकृति को शुद्ध मानते थे। इनके अनुसार मनुष्य की प्रकृति एक-दूसरे से प्रेम करने, सहयोग करने और सरल एवं सुखमय जीवन व्यतीत करने की होती है लेकिन सभ्यता के शिकंजे में वह झूठ, फरेब, मक्कारी और शोषण करना सीख जाता है। सभ्यता को रूसो ज्ञान और विज्ञान की उपज मानते थे इसलिए इन्होंने ज्ञान और विज्ञान का भी विरोध किया। इन्होंने अनुभव किया कि बुद्धिमान लोग सरल एवं स्वच्छ प्रकृति वाले लोगों का शोषण करते हैं इसलिए इन्होंने अपने युग के एक दूसरे क्रान्तिकारी विचारक वाल्टेयर के विवेकवाद अथवा बुद्धिवाद का भी विरोध किया और उसके स्थान पर हृदयवाद का नारा बुलन्द किया। इनका तर्क था कि मनुष्य की प्राकृतिक प्रकृति श्रेष्ठतम है इसलिए हमें बुद्धि के स्थान पर भावना का ही विकास करना चाहिए। इन्होंने नारा दिया— 'प्रकृति की ओर लौटो'। प्रकृति की ओर लौटने से इनका तात्पर्य बर्बरता की ओर लौटने से नहीं था अपितु कृत्रिम व्यवहार (सभ्यता) से स्वाभाविक व्यवहार (प्राकृतिक व्यवहार) की ओर लौटने से था। रूसो के अपने इन्हीं विचारों के आधार पर इनके दर्शन की तत्त्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा और आचार मीमांसा देखी-समझी जा सकती है।

रूसो के दार्शनिक चिन्तन की तत्त्व मीमांसा

यूँ रूसो ने न तो इस ब्रह्माण्ड की रचना के बारे में कुछ लिखा है और न कहीं आत्मा-परमात्मा की व्याख्या की है, पर थे ये ईश्वरवादी। ये आत्मा-परमात्मा के अस्तित्व को स्वीकार करते थे परन्तु स्वर्ग के ठेकेदार पादरियों का विरोध करते थे। सचमुच उस समय यूरोप-भर में पादरी धर्म के नाम पर भोली जनता का बेहद शोषण कर रहे थे। रूसो की अपनी धारणा थी कि ईश्वर ने इस वस्तुजगत की रचना बहुत सोच समझकर की है और इसकी प्रत्येक वस्तु अपने में शुद्ध है, मनुष्य भी, अतः उसे अपनी प्रकृति के अनुसार ही जीने देना चाहिए।

रूसो के दार्शनिक चिन्तन की ज्ञान मीमांसा

रूसो के अनुसार प्रकृति का ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है। प्रकृति शब्द का प्रयोग रूसो ने कई रूपों में किया है— एक उसके लिए जो मनुष्य के प्रयत्न बिना निर्मित है और दूसरी वह जो मनुष्य ने अपने जन्म से पाई है और जिसके साथ मनुष्य ने कोई छेड़-छाड़ नहीं की है। रूसो ने संसार के सभी दुःखों का कारण तत्कालीन सभ्यता और विज्ञान को बताया इसलिए ये इसके ज्ञान को आवश्यक नहीं मानते थे। आगे चलकर इन्होंने आदर्श राज्य का पूरा खाका तैयार किया और मनुष्य की पूरी शिक्षा योजना तैयार की और शिक्षा द्वारा मनुष्य को वह सब सिखाने पर बल दिया जो मनुष्य के लिए समग्र रूप से हितकर है। ज्ञान प्राप्ति के साधन एवं विधियों के विषय में रूसो का स्पष्ट मत है कि बच्चों को कर्मेन्द्रियों द्वारा करके और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा स्वयं के अनुभव से सीखने दो, ज्ञान बाहर से जबरन लादने की वस्तु नहीं, स्वयं करके स्वयं के अनुभव से प्राप्त करने की वस्तु है।

Scanned with CamScanner

रूसो के दार्शनिक चिन्तन की आचार मीमांसा

रूसो मनुष्य को ईश्वर की श्रेष्ठतम कृति मानते थे और यह मानते थे कि ईश्वर ने उसे जन्म से अच्छा बनाया है। यही कारण है कि इन्होंने मनुष्य को किसी भी प्रकार के सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक नियमों से मुक्त कर, उसे अपनी प्रकृति के अनुसार आचरण करने की सलाह दी है, और यह मानकर दी है कि उसकी स्वयं की प्रकृति सरल है, शुद्ध है, एक-दूसरे से प्रेम करने की है, एक-दूसरे से सहयोग करने की है और सुखपूर्वक जीने की है। इनका अपना अनुभव यह था कि सभ्यता के नाम पर मनुष्य झूठ, फरेबी, मक्कारी और शोषण करना सीखता है और यह बात सच भी है, उस समय यूरोप में प्रबुद्ध वर्ग सामान्य मनुष्यों का खूब शोषण कर रहा था। वैसे भी यदि हम रूसो की पहली बात को नजर अन्दाज कर इनकी दूसरी बात पर ध्यान दें तो स्पष्ट होता है कि रूसो मनुष्य से सरल एवं शुद्ध आचरण की अपेक्षा करते थे, उससे प्रेम एवं सहयोग के साथ रहने की अपेक्षा करते थे और उससे एक-दूसरे से झूठ न बोलने, फरेब न करने और एक-दूसरे का शोषण न करने की अपेक्षा करते थे। इसे रूसो ने एक शब्द—सत्संकल्प (Good Will) में अभिव्यक्त किया है। सच बात यह है कि रूसो ने अपने समय के दूषित समाज और उसकी दूषित सभ्यता एवं संस्कृति का विरोध किया था और दूषित राज्य का विरोध किया था अन्यथा तो इन्होंने स्वयं आदर्श राज्य की पूरी रूपरेखा प्रस्तुत की है और मनुष्य को मनुष्य बनाने की पूरी शिक्षा योजना प्रस्तुत की है।

रूसो का शैक्षिक चिन्तन

(Educational Thoughts of Rousseau)

रूसो का शैक्षिक चिन्तन इनके निम्नलिखित आधारभूत विचारों पर आधारित है—

(1) प्रकृति शुद्ध, सरल, सुन्दर एवं सुखदायक है।

(2) मनुष्य की प्रकृति भी स्वतन्त्र, पर शुद्ध, सरल, सुन्दर एवं सुखदायक है। वह स्वतन्त्र रहना चाहता है फिर भी उसमें एक-दूसरे से प्रेम करने, एक-दूसरे का सहयोग करने एवं एक-दूसरे को सुख पहुँचाने की जन्मजात प्रवृत्ति होती है।

(3) समाज अनेक दोषों से युक्त है और प्रकृति पूर्णरूपेण शुद्ध है।

(4) सभ्यता के कारण ही मनुष्य का व्यवहार अप्राकृतिक (कृत्रिम) हो गया है और वह प्रेम के स्थान पर द्वेष करने लगा है और दूसरों के सुख की चिन्ता करने के स्थान पर उनका शोषण करने लगा है।

(5) वास्तविक ज्ञान हमें प्रकृति से मिलता है, समाज से नहीं।

(6) मनुष्य की इन्द्रियाँ ज्ञान के द्वार हैं।

(7) ज्ञानेन्द्रियों द्वारा शिक्षा ही वास्तविक शिक्षा है।

आइए अब इनके शैक्षिक चिन्तन को क्रमबद्ध रूप से देखें-समझें।

शिक्षा का सम्प्रत्यय

रूसो के समय शिक्षा चर्च (धर्म) के हाथ में थी। उस समय राज्य पर भी चर्च का प्रभाव था और चर्च और राज्य का महत्त्व इतना अधिक था कि व्यक्ति के महत्त्व को भुला दिया गया था। शिक्षा में भी यही बात सत्य थी, बच्चे की व्यष्टिगत विशेषताओं का कोई महत्त्व नहीं था, सभी

Scanned with CamScanner

बच्चों को समान योग्यताओं का एक छोटा प्रौढ़ माना जाता था और उन्हें शीघ्र से शीघ्र चर्च एवं राज्य की मान्यताओं से परिचित कराकर राज्यभक्त बनाने का प्रयत्न किया जाता था। उस समय वर्ग भेद अपनी चरम सीमा पर था, निर्धनों की शिक्षा की समुचित व्यवस्था नहीं थी, और जन शिक्षा की अवहेलना हो रही थी। रूसो ने इस सबके विरोध में आवाज उठाई।

रूसो ने कहा कि शिक्षा एक प्राकृतिक क्रिया है जिसके द्वारा बच्चे की जन्मजात शक्तियों का प्राकृतिक विकास होता है, अतः सब बच्चों को उनके प्राकृतिक विकास का अवसर मिलना चाहिए। इन्होंने अपने समय की शिक्षा को कृत्रिम बताया क्योंकि उसमें बच्चे की प्राकृतिक शक्तियों का विकास नहीं होता था, अपितु उसे बाहर से सामाजिक मान्यताओं से परिचित कराया जाता था। इन्होंने ज्ञान देने के स्थान पर ज्ञान का विकास करने पर बल दिया। इन्होंने कहा कि बच्चों को सत्य से परिचित कराने की आवश्यकता नहीं, उन्हें सत्य खोजने योग्य बनाने की आवश्यकता है। इन्होंने सूचनाओं के स्थान पर अनुभव पर बल दिया। यह अनुभव इन्द्रियों द्वारा होता है इसलिए इन्होंने पहले इन्द्रियों को प्रशिक्षित करने और फिर उनके द्वारा अनुभव करने एवं उस अनुभव से सत्य का पता लगाने को ही शिक्षा कहा। इसे इन्होंने निषेधात्मक शिक्षा (Negative Education) की संज्ञा दी। पहले प्रकार की शिक्षा को ये निश्चयात्मक शिक्षा (Positive Education) कहते थे।

इस प्रकार रूसो के अनुसार शिक्षा के दो रूप हैं— एक निश्चयात्मक शिक्षा (Positive Education) और दूसरा निषेधात्मक शिक्षा (Negative Education)। रूसो के अपने शब्दों में—निश्चयात्मक शिक्षा वह शिक्षा है जो मनुष्य के विकास से पहले उसके मस्तिष्क का विकास करती है और बच्चे को प्रौढ़ों के कर्त्तव्यों से परिचित कराती है। (I call positive education one that tends to form the mind prematurely and instinct the child in the duties that belong to man)। और इनके अपने ही शब्दों में—निषेधात्मक शिक्षा वह शिक्षा है जो ज्ञान के साधन अवयवों को पहले मजबूत करती है। अवयवों द्वारा शिक्षा देना ही सच्ची शिक्षा है। यह इन्द्रियों के उचित अभ्यास से तर्क का मार्ग प्रशस्त करती है। निषेधात्मक शिक्षा का अर्थ निष्क्रियता नहीं है, यह इससे बहुत दूर है। यह सद्गुण प्रदान नहीं करती अपितु बुराई से बचाती है, यह सत्य प्रदान नहीं करती अपितु भूल से बचाती है। यह बालक को उस मार्ग की ओर प्रवृत्त करती है जो उस समय सत्य की ओर अग्रसर करेगा जब वह सत्य को समझने की आयु प्राप्त करेगा और उस समय अच्छाई की ओर अग्रसर करेगा जब वह इस अच्छाई को समझने एवं उससे प्रेम करने की शक्ति प्राप्त करेगा (I call negative education that which tends to perfect the organs that are the instruments of knowledge, giving this knowledge directly is true education, and that endeavours to prepare the way for reason by proper exercise of the senses. A negative education does not mean the time of idleness, far from it. It does not give virtue, it protects from vice, it does not inculcate truth, it protects from error. It disposes the child to take the faith that will lend him to turth when he has reached the age to understand it and to goodness when he has acquired the faculty of recognising and loving it.)।

Scanned with CamScanner

रूसो द्वारा प्रतिपादित निषेधात्मक शिक्षा में पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर इन्द्रियों के प्रशिक्षण एवं स्वानुभव द्वारा सीखने पर अधिक बल दिया गया है। इसमें बच्चों पर बन्धन नहीं होते, वे अपनी प्रकृति के अनुसार प्राकृतिक वातावरण में अपना विकास करने के लिए स्वतन्त्र रहते हैं। इसमें बच्चों को शाब्दिक निर्देशन नहीं दिए जाते, अपितु बच्चे स्वयं करके सीखते हैं।

रूसो निषेधात्मक शिक्षा को ही वास्तविक शिक्षा मानते थे। इनके अनुसार प्रारम्भ में बच्चों की शिक्षा पूर्णरूप से निषेधात्मक ही होनी चाहिए। किसी भी स्तर की शिक्षा में वे पुस्तकीय ज्ञान एवं शिक्षक के निर्देशनों का विरोध करते थे। इनके अनुसार वास्तविक शिक्षा वह है जो बच्चे के प्राकृतिक विकास में सहायक होती है और जिसमें व्यक्ति अथवा समाज द्वारा न्यूनतम निर्देशन होता है। इनके अपने शब्दों में—'शिक्षा अन्दर से होने वाला विकास है, बाहर से एक साथ होने वाली वृद्धि नहीं, यह प्राकृतिक मूल प्रवृत्तियों के क्रियाशील होने से विकसित होती है, बाह्य शक्तियों की प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप नहीं'(Education is a development from within, not an accretion from without, it comes through the working of natural instincts and not through response to external forces,)।

शिक्षा के उद्देश्य

रूसो समाज की अपेक्षा व्यक्ति को अधिक महत्त्व देते थे इसलिए इन्होंने शिक्षा द्वारा मनुष्य के वैयष्टिक विकास पर बल दिया है। इन्होंने कहा कि हमें किसी बच्चे को सैनिक, पादरी अथवा मजिस्ट्रेट बनाने से पहले उसे आदमी बनाना चाहिए। यह आदमी प्राकृतिक आदमी होगा और भावप्रधान आदमी होगा। यह सबसे प्रेम करेगा और सबका सहयोग करेगा। यह झूठ, दम्भ स्वार्थपरता के दोषों से मुक्त होगा। इसके लिए इन्होंने मनुष्य की नैसर्गिक शक्तियों के प्राकृतिक विकास की बात कही है। इनके अनुसार शिक्षा का यही उद्देश्य होना चाहिए। मनुष्य के विकास का एक क्रम है, वह कई अवस्थाओं —शिशु, बाल, किशोर एवं युवा को पार करता हुआ एक प्रौढ़ बनता है और भिन्न-भिन्न आयु स्तर पर उसकी शारीरिक एवं मानसिक स्थिति भिन्न होती है। रूसो ने इस भिन्नता के आधार पर भिन्न-भिन्न आयु स्तर की शिक्षा के उद्देश्यों में भी कुछ भिन्नता की है। उसे हम निम्नलिखित रूप में स्पष्ट कर सकते हैं—

1. **शारीरिक विकास**—मनुष्य एक मनोशारीरिक प्राणी है। उसका मन भी इस शरीर का अंग है। शरीर है तो मनुष्य का अस्तित्व है अथवा नहीं। इसलिए उसका शारीरिक विकास करना पहली आवश्यकता है। रूसो का विश्वास था कि शारीरिक दुर्बलता पाप की जननी है इसलिए ये प्रारम्भ से ही बच्चों को बलशाली बनाने पर बल देते थे। (All wickness comes from weakness. The child should be made strong so that he will do nothing which will be bad.)। इनके अनुसार शिशु शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य शारीरिक विकास ही होना चाहिए। अन्य स्तरों पर भी इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहना आवश्यक है।

2. **इन्द्रिय प्रशिक्षण**—इन्द्रियाँ ज्ञान के द्वार हैं। रूसो ने पुस्तकीय ज्ञान के विरोध में इन्द्रिय प्रशिक्षण एवं स्वानुभव द्वारा सीखने पर बल दिया है। इनके अनुसार बालकालीन शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य इन्द्रिय प्रशिक्षण ही होना चाहिए। रूसो कहते थे कि बच्चा छोटा प्रौढ़ नही होता, इसलिए उसे प्रौढ़ों के कर्त्तव्यों का ज्ञान इस स्तर पर नहीं कराना चाहिए। बच्चा, बच्चा ही होता है और

Scanned with CamScanner

बाल्यावस्था में उसकी प्रकृति अपने शारीरिक एवं इन्द्रिय विकास की होती है, अतः इस स्तर पर बच्चों की इन्द्रियों को मजबूत करने पर सबसे अधिक बल देना चाहिए।

3. बौद्धिक विकास—रूसो कहते थे कि जब बच्चे की इन्द्रियाँ प्रशिक्षित हो जाएँगी तो वह स्वानुभव द्वारा स्वयं सत्य की खोज करेगा और इस प्रकार उसका बौद्धिक विकास होगा। इसे भी वे शिक्षा का एक उद्देश्य मानते थे। इनके विचार से किशोरावस्था पर इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना चाहिए। ये कहते थे कि किशोरावस्था पर बच्चों को ऐसा पर्यावरण देना चाहिए कि वे परिश्रम करें, अध्यवसाय करें, अन्वेषण में रुचि लें और स्वानुभाव द्वारा ज्ञान का विकास करें।

4. भावात्मक विकास—रूसो के अनुसार मानव विकास के प्रथम तीन स्तरों पर क्रमशः शरीर, ज्ञानेन्द्रियों एवं बुद्धि का विकास करना चाहिए और जब इनका विकास हो चुके तो युवावस्था पर उनके हृदय का विकास करना चाहिए, उनमें मानव मात्र के प्रति प्रेम, सहानुभूति और सहयोग का भाव उत्पन्न करना चाहिए।

5. जीने की कला—रूसो जीवन के कटु सत्यों को पहचानते थे। ये जानते थे कि मनुष्य में जीने की इच्छा है और उसका जीना अन्य प्राणियों से भिन्न होता है। अतः ये उसे जीने की कला में भी दक्ष कर देना चाहते थे। इन्होंने एमिल की शिक्षा के विषय में स्वयं कहा है कि मैं उसे जीने के तरीके सिखाना चाहता हूँ (To live is the trade I wish to teach him)। इनके अनुसार पुरुष एवं स्त्रियों की प्राकृतिक रचना समान होते हुए भी उनका कार्य क्षेत्र भिन्न होता है इसलिए उन्हें अपने-अपने कार्यों का प्रशिक्षण मिलना चाहिए। पुरुषों को ये किसी व्यवसाय की शिक्षा देने के पक्ष में थे और स्त्रियों को गृहकार्य की शिक्षा देना चाहते थे।

6. अधिकारों की रक्षा—रूसो के समय चर्च और राज्य द्वारा सामान्य जनता का बहुत शोषण हो रहा था इसलिए इन्होंने शिक्षा द्वारा मनुष्य के शारीरिक विकास, इन्द्रिय प्रशिक्षण, बौद्धिक विकास, भावात्मक विकास और जीवन की कला के प्रशिक्षण के साथ-साथ उसमें अन्याय के विरोध करने की शक्ति के विकास पर बल दिया। इनका विश्वास था कि सुखपूर्वक जीने के लिए अधिकारों की रक्षा भी आवश्यक है।

7. स्वतन्त्र व्यक्तित्व का निर्माण—रूसो के समय यूरोप में मनुष्य समाज, धर्म और राज्य, इन तीनों के शिकंजे में दबा हुआ था। रूसो ने स्पष्ट किया कि मनुष्य जन्म से स्वतंत्र पैदा होता है, उसकी प्रकृति स्वतन्त्र रहने की है इसलिए उसे अपने समाज और अपने राज्य का निर्माण स्वयं करने और उनका संचालन स्वयं करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए और यह तभी सम्भव है जब मनुष्यों को सोचने और विचार अभिव्यक्त करने की पूर्ण स्वतन्त्रता हो। ऐसे पर्यावरण में मनुष्य में जिस व्यक्तित्व का निर्माण होता है उसे ही दूसरे शब्दों में स्वतन्त्र व्यक्तित्व का निर्माण कहते हैं।

शिक्षा की पाठ्यचर्या

रूसो ने मानव विकास की मनोवैज्ञानिक अवस्थाओं को प्रस्तुत किया और उसी के अनुसार प्रत्येक स्तर के लिए भिन्न-भिन्न उद्देश्य एवं भिन्न-भिन्न पाठ्यचर्या निश्चित की। ये बच्चों के ऊपर अपनी तरफ से कुछ भी लादने के पक्ष में नहीं थे, ये तो उनकी अपनी प्रकृति के अनुकूल पर्यावरण तैयार करने की बात कहते थे और इसलिए इन्होंने भिन्न-भिन्न आयु स्तर के बच्चों की मनोवैज्ञानिक

Scanned with CamScanner

स्थिति के अनुसार उनके लिए पाठ्यचर्या का विकास किया है। इन्होंने मनुष्य के शैक्षिक जीवन को चार कालों में बाँटा हैं और उनके लिए अलग-अलग पाठ्यचर्या निश्चित की है।

शैशव काल (जन्म से 5 वर्ष तक) —इस आयु में बच्चे पशु सदृश्य होते हैं, उनके पुट्ठे मजबूत होते हैं, वे क्रियाशील होते हैं, वे प्रति क्षण कुछ न कुछ करना चाहते हैं, वे खेलने, कूदने, दौड़ने और गायन में रुचि दिखलाते हैं, अतः इस स्तर पर बच्चों को इसी के लिए अवसर देने चाहिए। रूसो का विश्वास था कि कृत्रिम जीवन ने हमारा स्वास्थ्य चौपट कर दिया है इसलिए ये कहते थे कि बच्चों को प्रकृति की गोद में स्वतन्त्र विचरण करने दो, जिससे इनका शरीर शीत और गर्मी को सहन करने योग्य बन जाए। इस आयु स्तर के बच्चों के लिए ये किसी भी प्रकार के निर्देशन अथवा पुस्तकीय ज्ञान का विरोध करते थे।

बाल्यावस्था (5 से 12 वर्ष तक) —इस अवस्था पर भी बच्चों का शारीरिक विकास होगा और उन्हें खेलने, कूदने, दौड़ने तथा तैरने के पूर्ण अवसर प्रदान किए जाएँगे। इसके साथ-साथ उनकी इन्द्रियों का भी विकास होगा। इन्द्रिय प्रशिक्षण के लिए उन्हें भिन्न-भिन्न वस्तुओं को देखने, स्पर्श करने, सूँघने, सुनने एवं चखने के अवसर दिए जाएँगे और उनकी अनुभूतियों को भाषाबद्ध किया जाएगा। इसी आधार पर बच्चों को इस समय प्रकृति अध्ययन, भाषा, गणित और भूगोल की शिक्षा दी जानी चाहिए। इस समय वे स्वयं के अनुभवों के आधार पर सीखेंगे। आगे के स्तर पर इन्हीं विषयों का विस्तृत अध्ययन प्रारम्भ होगा।

किशोरावस्था (12 से 15 वर्ष तक) —इस स्तर पर बच्चों की शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों में विकास होता है और वे अपनी क्रियाओं के फल को समझने एवं मूल्यांकन करने लगते हैं। इस काल में जिज्ञासा की प्रवृत्ति बहुत तीव्र हो जाती है, बच्चे नई-नई चीजों की खोज में रुचि दिखलाते हैं अतः इस समय उन्हें प्राकृतिक विज्ञानों की शिक्षा दी जानी चाहिए। इसके साथ-साथ भाषा, गणित, भूगोल, हस्तकार्य, संगीत तथा सामाजिक जीवन की शिक्षा भी दी जानी चाहिए। उद्योग की शिक्षा भी इस स्तर पर प्रारम्भ कर देनी चाहिए। इसके अन्तर्गत रूसो ने लकड़ी के काम आदि को स्थान दिया है।

युवावस्था (15 से 25 वर्ष तक) —इस अवस्था में बालक, बालक न रहकर मनुष्य बनता है अतः अब उसके संवेगों को स्थिर करना चाहिए। रूसो इस समय निश्चयात्मक शिक्षा (Positive Education) को प्रारम्भ कर देने के पक्ष में थे। यद्यपि ये तत्कालीन समाज के विरोध में सामाजिकता का भी विरोध कर बैठे थे लेकिन अपने काल्पनिक पात्र एमील की शिक्षा का विधान करते समय इन्होंने सामाजिक नियम, नीति और धर्म के महत्त्व को स्वीकार किया था और युवावस्था पर इसकी शिक्षा का विधान भी किया था। रूसो चाहते थे कि इस अवस्था पर बच्चे मानव जीवन की विभिन्न झांकियों को स्वयं देखें। वे धनी एवं निर्धनों के रहन-सहन एवं व्यवहार को देखें, शुद्ध आचरण करने वालों को देखें, दीन-दुखियों को देखें, अस्पताल में मरीजों को देखें और कारावास में कैदियों को देखें। इससे उनके हृदय में मानव जीवन के प्रति भावनाएँ जागृत होंगी। इस समय उन्हें नीति एवं धर्म से भी परिचित कराया जाए, पर यह धर्म संकीर्ण नहीं होगा, इसमें कृत्रिमता नहीं होगी, यह भी प्राकृतिक धर्म (Natural Religion) होगा। प्रत्यक्ष अनुभवों द्वारा सद्गुणों की शिक्षा का विधान इस स्तर पर होना ही चाहिए। रूसो के अनुसार इस स्तर पर धार्मिक कथाएँ भी सुनाई जा सकती हैं पर वे भी काल्पनिक न होकर यथार्थ होनी चाहिएँ। उनसे प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, दया,

Scanned with CamScanner

क्षमा, सहनशक्ति आदि सद्गुणों का विकास होना चाहिए। इस स्तर पर रूसो ने इतिहास की शिक्षा का भी समर्थन किया है क्योंकि उससे आचरण की शिक्षा मिलती है। पूर्व स्तरों की शारीरिक एवं बौद्धिक शिक्षा का क्रम इस स्तर पर भी चालू रहेगा और उसकी व्यावसायिक शिक्षा अब पूर्ण होगी।

स्त्रियों के लिए पाठ्यचर्या —रूसो को अपने जीवन में किसी सभ्रान्त परिवार की पढ़ी-लिखी स्त्री का सुख प्राप्त नहीं हुआ था। समाज द्वारा ठुकराए इस व्यक्ति को किसी ऐसी नारी का प्यार भी नहीं मिला था। इन्हें स्त्री जाति से जो कुछ भी सुख मिला था वह अपनी दासी के रूप में। इसलिए स्त्रियों के सम्बन्ध में इनके विचार बड़े अटपटे हैं। एक ओर तो ये पुरुष एवं स्त्री को समान प्रकृति का बताते हैं और दूसरी ओर कहते हैं कि एक शिक्षित एवं सभ्य स्त्री अपने पति, बच्चों, पूरे परिवार एवं नौकरों, सभी के लिए प्लेग का रोग है (A women of culina, is the plague of her husband, her children, her family, her servants – every body)। इसीलिए इन्होंने एमील की पत्नी सोफिया को पैरिस की शिक्षित, सभ्य एवं शृंगारप्रिय स्त्री न बनाकर उसे गृह विज्ञान (भोजन बनाना, सीना-पिरोना, बच्चों का पालन करना आदि) की शिक्षा दी है। शिशु एवं बाल अवस्था पर तो ये बच्चों तथा बच्चियों के लिए समान क्रियाओं का विधान करते थे पर उच्च शिक्षा से स्त्रियों को वंचित कर उन्हें केवल गृहस्थ जीवन की शिक्षा देना उचित समझते थे। रूसो के अनुसार सद्व्यवहार की शिक्षा तो स्त्रियों को भी देनी होगी, क्योंकि सद्गुणों का विकास तो पुरुष एवं स्त्री दोनों में होना है। बिना सद्गुणों के विकास के तो मनुष्य के जीवन में सुख का प्रवेश होगा ही नहीं।

शिक्षण विधियाँ

रूसो मनुष्य को मनोशारीरिक प्राणी मानते थे और यह मानते थे कि उसका किसी भी प्रकार का विकास उसके शरीर (कर्मेन्द्रियों एवं ज्ञानेन्द्रियों) और मनन (मन की शक्तियों पर निर्भर करता है। इसी आधार पर इन्होंने शिक्षण विधियों का विकास किया। प्रकृति की ओर लौटो (Back to Nature) इनका सबसे पहला नारा था। इन्होंने इस बात पर बहुत बल दिया कि बच्चों की शिक्षा प्रकृति की गोद में होनी चाहिए और उनकी अपनी प्रकृति के अनुकूल होनी चाहिए। रूसो ने विकास की चार अवस्थाओं— शिशु, बाल, किशोर तथा युवा का वर्णन कर भिन्न-भिन्न अवस्था के बच्चों की प्रकृति का वर्णन किया और उनके लिए भिन्न-भिन्न क्रियाओं का चुनाव किया। पुस्तकीय शिक्षा को ये किसी भी स्तर के लिए स्वीकार नहीं करते थे।

रूसो के अनुसार बच्चों को स्वयं करके स्वयं के अनुभवों द्वारा सीखना चाहिए। स्वयं करके सीखना (Learning by Self Experience) इनका दूसरा नारा था। इन्होंने लिखा है कि अपने विद्यार्थी को मौखिक पाठ मत पढ़ाओ, उसे अनुभव द्वारा सीखने दो।

रूसो ज्ञानेन्द्रियों को ज्ञान का द्वारा मानते थे। इनके अनुसार पहले ज्ञानेन्द्रियों का विकास करना चाहिए; ज्ञान का विकास तो उनके द्वारा फिर स्वयं हो जाएगा। शिक्षण करते समय बच्चों की ज्ञानेन्द्रियों के प्रयोग पर ये बहुत बल देते थे। ज्ञानेन्द्रियों द्वारा शिक्षा (Education through Senses) इनका तीसरा नारा था।

Scanned with CamScanner

रूसो बच्चों को किसी प्रकार के भी नियन्त्रण में रखने का विरोध करते थे। इनका कहना था कि बच्चों को अपने प्राकृतिक विकास की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। शिक्षा में स्वतन्त्रता (Freedom in Education) इनका चौथा नारा था।

रूसो से पहले बच्चों को छोटा प्रौढ़ माना जाता था। रूसो ने इसका विरोध किया। इन्होंने स्पष्ट किया कि एक बच्चे की रुचि, रुझान, योग्यता और आवश्यकताएँ, प्रौढ़ व्यक्ति की रुचि, रुझान, योग्यता और आवश्यकताओं से भिन्न होती हैं। रूसो के अनुसार बच्चों को उनकी अपनी रुचि, रुझान, योग्यता और आवश्यकतानुसार शिक्षा देनी चाहिए। शिक्षण करते समय भी बच्चों की अपनी रुचि, रुझान और योग्यता का ध्यान रखना चाहिए । यह इनका पाँचवाँ और अन्तिम नारा था।

इस प्रकार रूसो ने शिक्षण की रूढ़िवादी विधियों का विरोध किया और शिक्षा के क्षेत्र में पूर्ण स्वतन्त्रता देकर बच्चों को स्वयं करके स्वयं के अनुभव से सीखने की एक नई विधि का निर्माण किया। इनके इन क्रान्तिकारी विचारों का प्रभाव आज की शिक्षण विधियों पर स्पष्ट दिखाई देता है।

रूसो ने पुस्तक प्रणाली को दोषयुक्त बताया और उसके स्थान पर करके सीखने और स्वानुभव द्वारा सीखने की बात कही। यह स्वानुभव ज्ञानेन्द्रियों द्वारा होता है, अतः बच्चों की शिक्षा में उनकी ज्ञानेन्द्रियों, पदार्थ एवं क्रिया का महत्त्व बढ़ा। इन्होंने बालक को अपनी प्रकृतिनुकूल सीखने के लिए स्वतन्त्र छोड़ने की बात भी कही और साथ ही बच्चों पर बाह्य बन्धन का विरोध किया। इससे भी स्वक्रिया को बल मिला। रूसो की इस विचारधारा ने आगे चलकर अवलोकन विधि, अन्वेषण विधि और डाल्टन प्रणाली आदि मनोवैज्ञानिक विधियों को जन्म दिया।

अनुशासन

अनुशासन के सम्बन्ध में भी रूसो के विचार अनूठे हैं। ये मनुष्य को जन्म से शुद्ध मानते थे। इनका विश्वास है कि विधाता सब वस्तुओं को शुद्ध बनाता है, मनुष्य के सम्पर्क में आकर ही वे विकृत होती हैं (Every thing is good as it comes from the hands of the author of nature, men maddle with it and it degenerates)। इन्होंने कहा कि बच्चे को इस दोषपूर्ण समाज से दूर स्वच्छ प्राकृतिक वातावरण में रक्खो, जहाँ वह स्वयं अनुशासित हो जाएगा। उसे बाहर से न तो कुछ बताने की आवश्यकता है और न उसकी भूलों पर उसे दण्ड देने की आवश्यकता है। इन्होंने कहा कि भूल के लिए प्रकृति स्वयं दण्ड देती है।

अनुशासन सम्बन्धी रूसो के विचारों को हम दो सिद्धान्तों के रूप में प्रकट कर सकते हैं— स्वतन्त्रता का सिद्धान्त (Principle of Freedom) तथा प्राकृतिक परिणाम का सिद्धान्त (Principle of Natural Consequences)। पहले सिद्धान्त के अनुसार हमें बच्चों को अपनी प्रकृतिनुकूल विकास करने देना चाहिए। उन पर किसी प्रकार का बाह्य बन्धन नहीं लगाना चाहिए। दूसरे सिद्धान्त के अनुसार बच्चों की भूल पर उन्हें दण्डित न किया जाए, प्रकृति स्वयं उन्हें दण्ड देगी, बुरे कार्यों से उन्हें दुःख होगा और अच्छे कार्यों से उन्हें सुख; सुख-दुःख के आधार पर वे क्रियाओं का चुनाव करेंगे और स्वयं से अनुशासित होने लगेंगे। रूसो के विचार से यही सच्चा अनुशासन है।

Scanned with CamScanner

शिक्षक

समाज के विरोध में रूसो ने सामाजिक प्राणी शिक्षक को भी दोषपूर्ण बताया और बच्चे की शिक्षा से उसे हटा देने की बात कही। परन्तु यह तो इनका केवल विरोध मात्र था, एमिल की शिक्षा में परिवार, विद्यालय एवं शिक्षक के महत्त्व को इन्होंने स्वयं स्वीकार किया है। परन्तु शिक्षक को ये अनुदेशक के रूप में कभी नहीं देखना चाहते। ये कहते हैं कि शिक्षक का कार्य बच्चे के प्राकृतिक विकास में सहायता प्रदान करना है, वह अनुदेशन नहीं देगा अपितु बच्चे के विकास के लिए पर्यावरण तैयार करेगा, वह उपदेश नहीं देगा अपितु बच्चे को स्वयं करने एवं स्वयं देखने और स्वयं निर्णय निकालने के अवसर देगा, वह उनका नियन्त्रक नहीं, सहायक होगा।

शिक्षार्थी

रूसो व्यष्टिवादी थे। ये व्यक्ति के व्यक्तित्व का आदर करते थे और उसे अपने वैयष्टिक विकास के लिए स्वतन्त्रता देने के पक्षपाती थे। इनका विश्वास था कि प्रत्येक मनुष्य जन्म से शुद्ध होता है और उसमें कुछ जन्मजात शक्तियाँ होती हैं जिनके आधार पर वह अपना विकास करता है। उसका यह विकास सच्चे रूप में तभी हो सकता है जब वह कृत्रिम वातावरण से दूर रक्खा जाए और वह अपने कार्यों एवं विचारों को प्रकट करने में स्वतन्त्र हो। यही कारण है कि इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में सबसे अधिक महत्त्व विद्यार्थी को दिया है। इन्होंने बच्चे की नैसर्गिक प्रवृत्तियों के स्वाभाविक विकास को ही शिक्षा की संज्ञा दी। इन्होंने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वाभाविक विकास करने के अवसर देने चाहिए, उन्हें किसी प्रकार के बन्धन में न रक्खा जाए। बच्चों को अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। यहाँ तक कि इन्होंने सामाजिक नियम एवं नैतिक आचरण के बन्धनों से भी बच्चों को मुक्त रखने की बात कही है। परन्तु इस मुक्ति से इनका अर्थ दूसरों को हानि पहुँचाने की छूट से कदापि नहीं था। रूसो ने शिक्षार्थी को शिक्षा का केन्द्र बना दिया और उसकी पूरी शिक्षा का विधान उसकी जन्मजात शक्तियों, रुचियों एवं आवश्यकताओं के अनुकूल किया। इन्होंने स्पष्ट किया कि भिन्न-भिन्न आयु वर्ग के बच्चों की शक्ति, रुचि एवं रुझान भिन्न-भिन्न होती हैं अतः भिन्न-भिन्न आयु स्तर पर भिन्न-भिन्न पाठ्यचर्या का नियोजन होना चाहिए। बच्चों को छोटा प्रौढ़ समझने की भूल कभी नहीं करनी चाहिए।

विद्यालय

रूसो अपने समय के समाज एवं सामाजिक संस्थाओं से बड़े असंतुष्ट थे। इन्होंने अपने समय के विद्यालयों की व्यवस्था को भी दोषपूर्ण बताया और उनका विरोध किया। इन्होंने प्रकृति की ओर लौटो का नारा दिया। इन्होंने कहा कि समाज और उसकी सभ्यता समस्त बुराइयों की जड़ है, इसलिए बच्चों को उसके कुप्रभावों से दूर रखना चाहिए और उन्हें प्रकृति की सुरम्य गोद में स्वतन्त्र रूप से विकास के अवसर प्रदान करने चाहिए। इस प्रकार विद्यालयों को ये समाज से दूर प्रकृति की सुरम्य गोद में स्थापित करने के पक्ष में थे। इन्होंने इस बात पर बहुत बल दिया कि विद्यालयों में बच्चों को पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए, उन्हें किसी भी प्रकार के नियन्त्रण में नहीं रखना चाहिए। विद्यालयों की समय सारणी (Time Table) को भी इन्होंने एक बन्धन बताया और कहा कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं है, बच्चे किसी भी समय कुछ भी कार्य करने के लिए स्वतन्त्र होने चाहिए। शिक्षक का कार्य केवल इतना ही होना चाहिए कि वे उनके स्वतन्त्र विकास के लिये

Scanned with CamScanner

पर्यावरण तैयार करें। रूसो के अनुसार विद्यालयों में शिक्षकों को बच्चों के सहयोगी के रूप में कार्य करना चाहिए न कि अनुदेशक के रूप में, उन्हें बच्चों को दण्ड नहीं देना चाहिए अपितु उनसे प्रेम करना चाहिए, उनके साथ सहानुभूति रखनी चाहिए और उनके कार्यों में हाथ बँटाना चाहिए। शिक्षकों को विद्यालयों का पर्यावरण इतना सरल, मधुर एवं शुद्ध रखना चाहिए कि बच्चे अपना स्वाभाविक (सरल एवं शुद्ध) विकास कर सकें।

शिक्षा के अन्य पक्ष

शिक्षा का प्रशासन—रूसो के समय राज्य को सर्वोच्च सत्ता माना जाता था और चर्च एवं राज्य का ही बोलबाला था। लोगों ने इस बात का प्रचार किया था कि मनुष्य राज्य के लिए ही पैदा होता है अतः उसे राज्य के आदेशों का पालन करना चाहिए। यह कार्य चर्च द्वारा सम्पादित हो रहा था और शिक्षा के माध्यम से हो रहा था। चर्च एक ओर धार्मिक अन्धविश्वासों का प्रचार कर रहा था और दूसरी ओर राज्य भक्ति का। इस प्रकार शिक्षा में चर्च एवं राज्य दोनों का महत्त्व था। रूसो ने इस कटुता का अनुभव किया और कहा कि ये चर्च एवं राज्य और अन्य सभी सामाजिक संस्थाएँ बड़ी दोषयुक्त हैं, इनसे मनुष्य के कल्याण की आशा नहीं करनी चाहिए, ये तो व्यक्ति के शोषण पर उतारू हैं। अतः आवश्यक है कि शिक्षा को इनके कुप्रभावों से दूर रखा जाय। इन्होंने कहा कि शिक्षा पर न तो चर्च का अधिकार होना चाहिए और न राज्य का। इन्होंने शिक्षा को किसी भी सामाजिक बन्धन से मुक्त रखने का विचार प्रस्तुत किया। शिक्षा पर राज्य के सर्वाधिकार का तो रूसो ने कस कर विरोध किया। पर शिक्षा की व्यवस्था कौन करे, इसका उत्तर रूसो ने नहीं दिया। ऐसा लगता है कि ये शिक्षा की व्यवस्था अपने जैसे व्यक्तियों के हाथ में देना चाहते थे क्योंकि इन्होंने स्वयं दो बच्चों की शिक्षा का भार लिया था।

जन शिक्षा—रूसो जन शिक्षा के बड़े हिमायती थे। इन्होंने प्रारम्भ से ही जन शिक्षा पर जोर दिया। पर इस शिक्षा की व्यवस्था समाज अथवा राज्य के सहयोग के बिना कैसे होगी, इसके बारे में इन्होंने कोई स्पष्ट योजना प्रस्तुत नहीं की।

स्त्री शिक्षा—रूसो स्त्री और पुरुष की शिक्षा में अन्तर रखना चाहते थे। इनके अनुसार पुरुष और स्त्री के कार्य क्षेत्रों में भिन्नता है, उन्हें इस भिन्नता के आधार पर ही अपना-अपना विकास करने देना चाहिए। ये स्त्रियों को गृह कार्य की शिक्षा देने के पक्ष में थे। ये स्त्रियों को फैशन परस्त नहीं देखना चाहते थे इसलिए उन्हें किसी उद्योग अथवा व्यवसाय की शिक्षा देने का विरोध करते थे।

व्यवसायिक शिक्षा—रूसो शिक्षा द्वारा मनुष्य को सुखपूर्वक जीने के लिए सक्षम बनाने पर बल देते थे और इसके लिए पुरुषों को जीविकोपार्जन हेतु व्यवसायिक शिक्षा और स्त्रियों को गृह कार्यों को निपुणता के साथ करने हेतु गृह शिक्षा देने पर बल देते थे।

धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा—यूँ रूसो ने जीवन भर समाज, धर्म और राज्य का खुलकर विरोध किया था परन्तु वास्तविकता यह है कि ये समाज विरोधी नहीं थे, तत्कालीन दूषित समाज विरोधी थे, ये धर्म विरोधी नहीं थे, तत्कालीन चर्च द्वारा सामान्य जनता के शोषण के विरोधी थे, ये राज्य विरोधी नहीं थे, तत्कालीन निरंकुश शासन तन्त्र विरोधी थे। इन्होंने अपनी पुस्तक 'एमिल' में एमिल और सोफिया दोनों के लिए धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा की व्यवस्था की है परन्तु इनकी यह धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा संकीर्ण नहीं है, यह मानव मात्र के प्रति प्रेम की शिक्षा है, सेवा की शिक्षा है, सत्संकल्प (Good Will) की शिक्षा है।

Scanned with CamScanner